मौसी

भुवनेश्वर

मौसी

मानव-जीवन के विकास में एक स्थल ऐसा आता है, जब वह परिवर्तन पर भी विजय पा लेता है। जब हमारे जीवन का उत्थान या पतन, न हमारे लिए कुछ विशेषता रखता है, न दूसरों के लिए कुछ कुतूहल। जब हम केवल जीवित के लिए ही जीवित रहते हैं और वह मौत आती है; पर नहीं आती।

बिब्बो जीवन की उसी मंजिल में थी। मुहल्लेवाले उसे सदैव वृद्धा ही जानते, मानो वह अनन्त के गर्भ में वृद्धा ही उत्पन्न होकर एक अनन्त अचिन्त्य काल के लिए अमर हो गयी थी। उसकी 'हाथी के बेटों की बात', नई-नवेलियाँ उसका हृदय न दुखाने के लिए मान लेती थीं। उसका कभी इस विस्तृत संसार में कोई भी था, यह कल्पना का विषय था। अधिकांश के विश्वास-कोष में वह जगन्नियन्ता के समान ही एकाकी थी; पर वह कभी युवती भी थी, उसके भी नेत्रों में अमृत और विष था। झंझा की दया पर खड़ा हआ रूखा वृक्ष भी कभी धरती का हृदय फाड़कर निकला था, वसन्त में लहलहा उठता था और हेमन्त में अपना विरही जीवनयापन करता था, पर यह सब वह स्वयं भूल गयी थी। जब हम अपनी असंख्य दुखद स्मृतियाँ नष्ट करते हैं, तो स्मृति-पट से कई सुख के अवसर भी मिट जाते हैं। हाँ, जिसे वह न भूली थी उसका भतीजा, बहन का पुत्र - वसन्त था। आज भी जब वह अपनी गौओं को सानी कर, कच्चे आँगन के कोने में लौकी-कुम्हड़े की बेलों को सँवारकर प्रकाश या अन्धकार में बैठती, उसकी मूर्ति उसके सम्मुख आ जाती।

वसन्त की माता का देहान्त जन्म से दो ही महीने बाद हो गया था और पैंतीस वर्ष पूर्व उसका पिता पीले और कुम्हलाए मुख से यह समाचार और वसन्त को लेकर चुपचाप उसके सम्मुख खड़ा हो गया था... इससे आगे की बात बिब्बो स्वप्न में भी नहीं सोचती थी। कोढ़ी यदि अपना कोढ़ दूसरों से छिपाता है तो स्वयं भी उसे नहीं देख सकता - इसके बाद का जीवन उसका कलंकित अंग था।

वसन्त का पिता वहीं रहने लगा। वह बिब्बों से आयु में कम था। बिब्बो, एकाकी बिब्बो ने भी सोचा, चलो क्या हर्ज है, पर वह चला ही गया और एक दिन वह और वसन्त दो ही रह गए। वसन्त का बाप उन अधिकांश मनुष्यों में था, जो अतृप्ति के लिए ही जीवित रहते हैं, तो तृप्ति का भार नहीं उठा सकते। वसन्त को उसने अपने हृदय के रक्त से पाला; पर वह पर लगते ही उड़ गया और वह फिर एकाकी रह गयी। वसन्त का समाचार उसे कभी-कभी मिलता था। दस वर्ष पहले वह रेल की काली वर्दी पहने आया था और अपने विवाह का निमंत्रण दे गया, इसके पश्चात् सुना, वह किसी अभियोग में नौकरी से अलग हो गया और कहीं व्यापार करने लगा। बिब्बो कहती कि उसे इन बातों में तनिक भी रस नहीं है। वह सोचती कि आज यदि वसन्त राजा हो जाए, तो उसे हर्ष न होगा और उसे कल फाँसी हो जाए, तो न शोक। और जब मुहल्लेवालों ने प्रयत्न करना चाहा कि दूध बेचकर जीवन-यापन करनेवाली मौसी को उसके भतीजे से कुछ सहायता दिलाई जाए तो उसने घोर विरोध किया।

दिन दो घड़ी चढ़ चुका था, बिब्बो की दोनों बाल्टियाँ खाली हो गयी थीं। वह दुधाड़ी का दूध आग पर चढ़ाकर नहाने जा रही थी, कि उसके आँगन में एक अधेड़ पुरुष 5 वर्ष के लड़के की उँगली थामे आकर खड़ा हो गया।

'अब न होगा कुछ, बारह बजे...' वृद्धा ने कटु स्वर में कुछ शीघ्रता से कहा।

'नहीं मौसी...'

बिब्बो उसके निकट खड़ी होकर उसके मुँह की ओर घूरकर स्वप्निल स्वर में बोली - वसन्त! - और फिर चुप हो गई।

वसन्त ने कहा - मौसी, तुम्हारे सिवा मेरे कौन है? मेरा पुत्र बे-माँ का हो गया? तुमने मुझे पाला है, इसे भी पाल दो, मैं सारा खरचा दूँगा।

'भर पाया, भर पाया', - वृद्धा कम्पित स्वर में बोली।

बिब्बो को आश्चर्य था कि वसन्त अभी से बूढ़ा हो चला था और उसका पुत्र बिलकुल वसन्त के और अपने बाबा... के समान था। उसने कठिन स्वर में कहा - वसन्त, तू चला जा, मुझसे कुछ न होगा। वसन्त विनय की मूर्ति हो रहा था और अपना छोटा-सा सन्दूक खोलकर मौसी को सौगातें देने लगा।

वृद्धा एक महीने पश्चात् तोड़नेवाली लौकियों को छाकती हुई वसन्त से जाने को कह रही थी; पर उसकी आत्मा में एक विप्लव हो रहा था उसे ऐसा भान होने लगा, जैसे वह फिर युवती हो गयी और एक दिन रात्रि की निस्तब्धता में वसन्त के पिता ने जैसे स्वप्न में उसे थोड़ा चूम-सा लिया और... वह वसन्त को वक्ष में चिपकाकर सिसकने लगी।

हो... पर वह वसन्त के पुत्र की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखेगी। वह उसे कदापि नहीं रखेगी, यह निश्चय था। वसन्त निराश हो गया था पर सबेरे जब वह बालक मन्नू को जगाकर ले जाने के लिए प्रस्तुत हुआ, बिब्बो ने उसे छीन लिया और मन्नू और दस रुपये के नोट को छोड़कर वसन्त चला गया।

2.बिब्बो का दूध अब न बिकता था। तीनों गायें एक के बाद एक बेच दीं। केवल एक मन्नू की बछिया रह गई थी। कुम्हड़े और लौकी के ग्राहकों को भी अब निराश होना पड़ता था। मन्नू - पीला, कान्तिहीन, आलसी, सिन्दूरी, चंचल और शरारती हो रहा था। ...

महीने में पाँच रुपया का मनीऑर्डर वसन्त भेजता था; पर एक ही साल में बिब्बो ने मकान भी बन्धक रख दिया। मन्नू की सभी इच्छाओं की पूर्ति अनिवार्य थी। बिब्बो फिर समय की गति के साथ चलने लगी। मुहल्ले में फिर उसकी आलोचना, प्रत्यालोचना प्रारम्भ हो गयी। मन्नू ने उसका संसार से फिर सम्बन्ध स्थापित कर दिया; जिसे छोड़कर वह आगे बढ़ गयी थी पर एक दिन साँझ को अकस्मात् वसन्त आ गया। उसके साथ एक ठिंगनी गेहुएँ रंग की स्त्री थी, उसने बिब्बो के चरण छुए। चरण दबाए और फिर कहा - मौसी, न हो मन्नू को मुझे दे दो, मैं तुम्हारा यश मानूँगी।

वसन्त ने रोना मुँह बनाकर कहा - हाँ, किसी को जीवन संकट में डालने से तो यह अच्छा है, ऐसा जानता, तो मैं ब्याह ही क्यों करता?

मौसी ने कहा - अच्छा, उसे ले जाओ।

मन्नू दूसरे घर में खेल रहा था। वृद्धा ने काँपते हुए पैरों से दीवार पर चढ़कर बुलाया।

वह कूदता हुआ आया। नई माता ने उसे हृदय से लगा लिया। बालक कुछ न समझ सका, वह मौसी की ओर भागा।

बिब्बो ने उसे दुतकारा - जा, दूर हो।

बेचारा बालक दुत्कार का अर्थ समझने में असमर्थ था, वह रो पड़ा।

वसन्त हतबुद्धि-सा खड़ा था। बिब्बो ने मन्नू का हाथ पकड़ा, मुँह धोया और आँगन के ताख से जूते उतारकर पहना दिए।

वसन्त की स्त्री मुस्कराकर बोली - मौसी, क्या एक दिन भी न रहने दोगी? अभी क्या जल्दी है। पर, बिब्बो जैसे किसी लोक में पहुँच गयी हो। जहाँ यह स्वर-संसार का कोई स्वर-न पहुँच सकता हो। पलक मारते मन्नू को खेल की, प्यार की, दुलार की सभी वस्तुएँ उसने बाँध दीं। मन्नू को भी समझा दिया कि वह सैर करने अपनी नई माँ के साथ जा रहा था।

मन्नू उछलता हुआ पिता के पास खड़ा हो गया। बिब्बो ने कुछ नोट और रुपये उसके सम्मुख लाकर डाल दिए - ले अपने रुपये।

वसन्त धर्म-संकट में पड़ा था, पर उसकी अर्द्धांगिनी ने उसका निवारण कर दिया। उसने रुपये उठा लिये। मौसी, इस समय हम असमर्थ हैं; पर जाते ही अधिक भेजने का प्रयत्न करूँगी, तुमसे हम लोग कभी उऋण नहीं हो सकते।

मन्नू माता-पिता के घर बहुत दिनों तक सुखी न रह सका। महीने में दो बार रोग-ग्रस्त हुआ। नई माँ भी मन्नू को पाकर कुछ अधिक सुखी न हो सकी। अन्त में एक दिन रात-भर जागकर वसन्त स्त्री के रोने-धोने पर भी मन्नू को लेकर मौसी के घर चल दिया।

वहाँ पहुँचकर उसने देखा कि मौसी के जीर्ण द्वार पर कुछ लोग जमा हैं। वसन्त के एक्के को घेरकर उन्होंने कहा - आपकी यह मौसी हैं। आज पाँच दिन से द्वार बन्द हैं, हम लोग आशंकित हैं।

द्वार तोड़कर लोगों ने देखा - वृद्धा पृथ्वी पर एक चित्र का आलिंगन किये नीचे पड़ी है, जैसे वह मरकर अपने मानव होने का प्रमाण दे रही हो।

वसन्त के अतिरिक्त किसी ने न जाना कि वह चित्र उसी के पिता का था पर वह भी यह न जान सका कि वह वहाँ क्यों था!

(हंस, अक्टूबर, 1934)

.